यह लेख समय के अंतराल के साथ व्यवस्था के हाथों चोट खाए व्यक्ति के रूपांतरण की व्यथा कहता है। लेखक ने दस वर्ष पहले जिस युवा शिक्षा-मित्र को जोश और उमंग के साथ विद्यालय में काम करते देखा वही व्यक्ति दस वर्ष के अंतराल के बाद उसे व्यवस्था से नाराज व्यक्ति के रूप में मिला। लेखक इसी व्यक्ति के दोनों रेखाचित्रों को आमने-सामने रखते हुए उन कारणों की ओर इशारा करता है जो व्यक्ति के इस रूपांतरण के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं।

शिक्षा-मित्र का आत्म-कथ्य

फरोग अहमद जामी

पिछले 12 वर्षों से भारत के अनेक राज्यों में वंचित वर्ग के बच्चों की शिक्षा के मुद्दे पर कार्य करते हुए अध्यापक-शिक्षा, सामग्री विकास एवं शोध से जुड़े रहे हैं। वर्तमान में यूनीसेफ, मध्य प्रदेश में कार्यरत हैं।

गर्मियों के दिन थे, जब मैं पहली बार इस विद्यालय में गया था। विद्यालय खुलने के समय से करीब 10 मिनट पहले मैं दो कमरे व एक बरामदे वाले हिंदी भाषी प्रदेश के जिला मुख्यालय से 20 कि.मी. दूर पक्की सड़क के पास बने विद्यालय में पहुंचा। कुछ बच्चे विद्यालय के सामने के मैदान में अपने साथियों से बात कर रहे थे। ज्यादातर बच्चों ने घर में पहने जाने वाले रोजमर्रा के कपड़े पहने हुए थे। अलबत्ता, आर्थिक तंगी कहीं टूटे बटन, फ्राक के पीछे खराब चेन की जगह लगी सेफ्टी पिन और नंगे मैले पैरों से झलकती थी।

कुछ ही मिनटों बाद एक नौजवान आया। उसने अभिवादन किया और बताया कि वह यहां पिछले छह महीने से बतौर शिक्षा-मित्र काम कर रहा है। इसके बाद उसने मेरा परिचय पूछा। यह पता चलने पर कि मैं भी किसी गैर-सरकारी संस्था में शिक्षा में काम करता हूं और यहां विद्यालय के कामकाज का तरीका समझने आया हूं, शिक्षा-मित्र ने खुश मिजाजी से कहा, "जरूर सर!" उसने मुझे एक प्लास्टिक की कुर्सी दी और वह स्वयं विद्यालय के कार्यों में लग गया।

सब बच्चे लाइन से मैदान में खड़े हो गए एवं आने वाले बच्चे लाइन में पीछे जुड़ते गए। प्रार्थना, शपथ और इसके बाद दो-तीन व्यायाम कराए गए। शिक्षा-मित्र बड़े जोश के साथ हर काम को करवा रहा था, कोई बच्चा यदि ठीक से नहीं कर पाता तो नाम लेकर उसे ठीक से करने को कहता। इसके बाद बच्चों ने विद्यालय के मैदान व कक्षा की सफाई का काम किया। शिक्षा-मित्र बड़े उत्साह से पूरे काम की देख-रेख कर रहा था। बच्चे भी 'सर जी' कहकर बिना किसी झिझक के शिक्षा-मित्र से बात करते या उन्हें बुलाते थे। गांव के ज्यादातर

बच्चे इसी स्कूल में पढ़ रहे थे। यह पूछने पर कि इस विद्यालय में क्या आप अकेले हैं, पता चला कि दो और 'सरकारी शिक्षक' हैं। यह भी बताया कि वे तो रोज समय से आते हैं, पर आज लेट हो गए हैं। शिक्षा-मित्र ने बताया कि वह कक्षा 1 व 2 को पढ़ाते हैं, 'हेड सर' कक्षा 5 पढ़ाते हैं व 'दूसरे सर' कक्षा 3 व 4 को।

अब बच्चों के कक्षा में जाने का समय हो गया। अब तक विद्यालय में करीब 180 बच्चे आ गए थे जबकि यहां 230 बच्चे नामांकित थे। आधे घंटे बाद हेड सर भी आ गए और कहा कि साइकिल पंचर होने के कारण देर हुई व करीब एक घंटे बाद 'दूसरे सर' भी आ गए। सभी बच्चे अपनी जगह फर्श पर चटाई बिछाकर बैठे थे। कक्षा 1 व 2 एक साथ पहले कमरे में, कक्षा 3 व 4 दूसरे कमरे में और कक्षा 5 बरामदे में लगी थी। पहले कमरे में शिक्षक ने बोर्ड पर गिनती लिखी थी जिसे बच्चे उतार रहे थे, दूसरे कमरे में बच्चों को जोड़ के सवाल लगाने का काम दिया गया था व बरामदे में कुछ बच्चे सुलेख लिख रहे थे।

करीब दस साल बाद इस विद्यालय में दोबारा जाने का अवसर मिला। वह भी साल के उन्हीं दिनों में जब मैं पहली बार गया था। रास्ते में कई नई दुकानें खुल चुकी थीं, जिनमें मोबाइल व पेप्सी की दुकानें सबसे ज्यादा थीं। बाकि सब वैसा ही... गोबर पातती महिलाएं, फटे-पुराने कपड़ों में सड़क किनारे अपना माल बेचते लोग व बालों में लाली लिए कुपोषित बच्चे। हां, सड़क कुछ बेहतर हो चुकी थी और गांव के कुछ मकान पक्के हो गए थे।

मैं करीब 15 मिनट पहले विद्यालय पहुंचा और देखा कि पिछले सालों में 3 और नए कमरे बन गए थे, पुरानी इमारत से हटकर, बिलकुल बेतरतीब से। बाद में पता चला कि सर्व शिक्षा अभियान की तरफ से अतिरिक्त कक्ष मिला था, इसलिए अलग-अलग टुकड़े में नक्शा बनाना पड़ा। विद्यालय खुलने के समय के 15 मिनट बाद ही शिक्षा-मित्र आए व उनके पीछे-पीछे 5-7 बच्चे भी आते नजर आए। किसी अनजान व्यक्ति को देखकर शिक्षा-मित्र को खीज-सी तो हुई, पर उन्होंने कहा कुछ नहीं। शिक्षा-मित्र ने कमरों के ताले खोले व शिक्षक-कक्ष में कुछ कागजी काम करने के बाद एक प्लास्टिक की कुर्सी पर बैठते हुए अनमने ढंग से मुझे देखकर कहा, "बैठिए, मैं विद्यालय लगाता हूं।" मेरे आग्रह करने पर, कि कुर्सी की जरूरत नहीं है, शिक्षा-मित्र चले गए।

मैदान में बच्चों ने लाइन बनाई व प्रार्थना सत्र आरंभ हुआ। राष्ट्रीय गान के बाद बच्चों ने दो गीत गाये- हरा समंदर, गोपी चंदर... और इब्न बतूता पहन के जूता...। इस बार शिक्षा-मित्र के चेहरे पर जोश की जगह चिड़चिड़ापन व गुस्से के भाव थे। बच्चों को उन्होंने डांटा भी खूब। एक-दो बच्चे तो पिट ही जाते, पर मेरे सामने डंडा चलाना शायद उन्होंने उचित नहीं समझा। कुछ और बदलाव दिखे इस बार, ज्यादातर बच्चे यूनिफार्म में थे लेकिन बच्चों की संख्या काफी कम हो चुकी थी। पूछने पर पता चला कि पास में एक मॉटेंसरी (अंग्रेजी का प्राईवेट विद्यालय) एवं एक और सरकारी विद्यालय खुला है और कुछ बच्चे वहां भी जाते हैं। यह बाद में पता चला कि अभी भी करीब 150 बच्चे नामांकित हैं पर रोजाना औसतन 40-50 बच्चे ही आते हैं। शिक्षा-मित्र ने कहा, "जो कोई भी फीस दे सकता है वह अपने बच्चे को मॉटेंसरी में पढ़ाता है।" प्रार्थना सत्र के बाद बच्चे तीन कक्षाओं में बैठ गए। अब विद्यालय में पांच कमरे थे पर उसमें से एक नए बने कमरे की छत टूट रही थी इसलिए खतरा था और एक कमरे में ग्राम प्रधान की भैसों का भूसा भरा था। तीन कमरे विद्यालय के जिम्मे थे।

यह बताने पर कि कई साल पहले मैं आपसे इसी विद्यालय में मिला था, शिक्षा-मित्र कुछ सहज हुए लेकिन माथे पर तनाव फिर भी कम न हुआ। बच्चों को पुस्तक में से कुछ नकल करने का काम सभी कक्षाओं में देकर शिक्षा-मित्र ने मुझे अपने साथ बरामदे में बिठाया। इसके बाद मुझे कुछ पूछने की जरूरत नहीं पड़ी, वे कहते गए, कहते गए, कहते गए।

''सर मैं अकेला शिक्षक हूं, और इस विद्यालय को चलाता हूं।''

''हैड सर 5-6 साल पहले रिटायर हो गए, दूसरे सर इंचार्ज हैं पर कभी स्कूल नहीं आते, मोटी पगार पाते हैं।''

''पहले भी सरकारी टीचर नहीं पढ़ाते थे, पर कागज (आंकड़े, प्रपत्र आदि) का काम तो करते थे; अब वह भी नहीं करते, इसे भी अब मैं ही करता हूं।''

''दूसरी शिक्षा-मित्र प्रधानजी के भतीजे की पत्नी हैं और आज तक एक बार भी विद्यालय नहीं आईं।''

''जब यह सरकारी टीचर हमसे पांच गुना पगार पाते हैं और नहीं पढ़ाते तो हम क्यों पढ़ाएं ?''

''कोई काम हो तो सरकार शिक्षा-मित्र को देखती है, पर कोई भविष्य नहीं 'हमारा'। लाइफ क्रश हो गई है।''

''हमने सरकार से मांग की, आंदोलन किया पर क्या मिला! लाठी खाई।''

''आज आपके कारण सब बच्चे तीन कक्षा में बैठे हैं, पर रोज पांचों कक्षा एक साथ बैठती हैं। पढ़ाई-वढ़ाई कहां से कराए अकेला शिक्षक। डेढ़-सौ में से चालीस-पचास बच्चे आते हैं रोज।''

''बच्चे व अभिभावक भी पोषाहार खाने के लिए विद्यालय को देखते हैं, विद्या के लिए नहीं।''

''सरकार को पूरी पगार पाने वाले टीचर को टाइट करना चाहिए। पर कुछ नहीं हो सकता, ऊपर से नीचे तक, किसी को परवाह नहीं।''

''इस महंगाई में हमारे मानदेय से क्या परिवार चल सकता है? शिक्षा-मित्र तो न्यूनतम मजदूरी से भी कम पाते हैं, ऐसा शोषण क्यों?''

''ट्रेनिंग से पेट नहीं भरता।''

इस तरह के अनुभव कुछ नए नहीं हैं, आपने भी देखे-सुने होंगे। पर ये अनुभव कई सवालों को जन्म देते हैं।

दस साल के अन्तराल में मुझे ऐसा लगता है कि सरकारी विद्यालय की अवस्था और पहचान बदतर हुई। कुछ पहलू जो मेरे मन में उभरते हैं, वे इस तरह हैं :

- शिक्षकों की जाति (पैरा-टीचर, रेगुलर टीचर...) गढ़कर व्यवस्था ने गरीब बच्चों की शिक्षा पर सबसे बड़ा आघात किया है। यह नियो कॉन सोच का नतीजा भी हो सकता है या महज राजनैतिक मौकापरस्ती का नतीजा। पर आज पैरा-टीचर और टीचर के रूप में एक तरह से सभी को काम न करने का कोई न कोई बहाना दिया है। 'हम परमानेन्ट हैं', नहीं पढ़ाएं तो कुछ नहीं होगा- यह सोच पहले से ही भ्रष्ट समाज में और भी फल-फूल सकती है।
- शिक्षकों की जवाबदेही स्थापित करने में नाकामी से भी बहुत बड़ा नुकसान हुआ है। इसका पहला कारण है, दो अतिवादी ध्रुवों में अटकी बहस कि शिक्षक को एक विवेकशील, स्व-निर्देशित, समतामूलक व स्वतंत्र; अतः ईमानदार व्यक्ति के रूप में देखा जाए या फिर एक अविश्वसनीय, काम न करने की प्रवृत्ति वाले व्यक्ति के रूप में देखा जाए। इन दोनों ध्रुवों पर अटके रहने के कारण एक संतुलित नजरिया ठीक से नहीं उभर पाया है। नतीजा यह हुआ कि दूसरे ध्रुव पर शिक्षा व्यवस्था टिक गई और अन्ततः अपने प्रयोजन में नाकाम रही है।
- अत्यधिक मॉनिटरिंग यानी निगहबानी से भी शिक्षा तंत्र के उद्देश्य खिसककर वहीं पहुंच गए, जिसे मापा जा सकता हो, भले वह असली उद्देश्य न हो। इसी का नतीजा है कि शिक्षक, संकुल संदर्भ केन्द्र, ब्लॉक संदर्भ केन्द्र, जिला कार्यालय, प्रदेश व राष्ट्रीय स्तर तक सबकी अच्छी-खासी ऊर्जा आंकड़ेबाजी के चक्कर में खर्च होती है। इसका एक बड़ा नुकसान यह हुआ है कि तंत्र में झूठ बोलने व लिखने की प्रवृत्ति बन और बढ़ गई है। इसने गैर-ईमानदारी को जन्म दिया। जहां तंत्र ऐसा हो, क्या वहां पर शिक्षा ठीक होगी और वह भी गरीब बच्चों की?
- जिस प्रकार स्कूली तंत्र का विस्तार/फैलाव हुआ, उसके अनुपात में शिक्षा से जुड़ी संस्थाओं का विस्तार नहीं हुआ, बल्कि कई जगह उल्टा ही हुआ। शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं का विस्तार अटका रहा, जिला कार्यालय की क्षमता में विस्तार नहीं हुआ, आदि। नतीजा प्रशिक्षित शिक्षक नहीं मिलते और उनकी एवज में पैरा-टीचर ले लिए जाते हैं। ऐसा कोई भी दूसरा महकमा नजर नहीं आता जहां पेशेवराना विकास की ऐसी लचर हालत हो। जब कॉरपोरेट सेक्टर में काम आने वाले तरीकों को शिक्षा में लागू करने की वकालत की जाती है तो वे भी कई मुद्दों को अनदेखा कर देते हैं, जैसे किस अनुपात में मानव संसाधन विकास करने की व्यवस्था है या किस प्रकार की अन्य सुविधाएं हैं। शिक्षा तंत्र में पिछले 10-12 सालों में एक औसत जिले में जहां 3000-5000 टीचर होंगे, वहां ज्यादातर शिक्षक ट्रेनिंग या भवन निर्माण या आंकड़े सहेजने में लगे रहते हैं जिसका नतीजा सामने है। सीमित प्रबंधकीय क्षमता से हर काम की गुणवत्ता कम हुई है व बेईमानी बढ़ी है।
- वर्तमान स्थिति को देखकर ऐसा लगता है कि शायद सरकार ने मान लिया है कि भारत के विकास और विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाने के लिए जिस मानव संसाधन की जरूरत है, वह सरकारी विद्यालय से नहीं आएगा। वह प्राईवेट विद्यालय से ही आएगा। इसलिए वोट के लिए सरकारी शिक्षा व्यवस्था को चलाने का स्वांग रचते रहा जाए और असली ताकत मध्यम वर्ग के बच्चों को और बेहतर ढंग से निखारने में लगाएं। आप और हम सभी जानते हैं कि कितने प्रतिशत मध्यम वर्गीय परिवारों के बच्चे सरकारी स्कूल में पढ़ते हैं। यह सोच और होड़ धीरे-धीरे आवाम् में सरायत् कर गई है। ◆